इकाई 37 "कुरुक्षेत्र" का वस्तुपक्ष

इकाई की रूपरेखा

37.0 उद्देश्य
37.1 प्रस्तावना
37.2 कथानक के स्रोत अथवा आधार
37.3 'कुरुक्षेत्र' का कथा-संयोजन
  37.3.1 इतिहास और कल्पना का योग
  37.3.2 वस्तु-व्यंजना
  37.3.3 कथानक में नूतन उद्भावनाएँ
37.4 चरित्र-चित्रण
  37.4.1 युधिष्ठिर
  37.4.2 भीष्म
  37.4.3 कुरुक्षेत्र के चरित्र-विधान की विशेषताएँ
37.5 प्रकृति और संवेदना
37.6 भाव-रस व्यंजना
37.7 सारांश
37.8 शब्दावली
37.9 बोध प्रश्नों के उत्तर

37.0 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप बता सकेंगे कि :

- कुरुक्षेत्र के कथानक के स्रोत क्या हैं,
- कवि ने कथा-संयोजन किस प्रकार किया है,
- इतिहास में कल्पना का समावेश किस प्रकार और किस हद तक किया गया है,
- कथावस्तु की व्यंजना किस प्रकार हुई है तथा उसमें किन नवीनताओं का समावेश हुआ है,
- कुरुक्षेत्र के चरित्र-विधान की क्या विशेषताएँ हैं,
- इस काव्य में प्रकृति का निरुपण किस रूप में हुआ है,
- कुरुक्षेत्र में भाव-व्यंजना अथवा रसविधान की क्या स्थिति है।

37.1 प्रस्तावना

इस खंड की पिछली इकाइयों में आपने प्रबंध काव्य के स्वरूप और विकास के बारे में पढ़ा है तथा आधुनिक हिन्दी काव्य की एक महत्वपूर्ण प्रबंधरचना रामधारी सिंह दिनकर के 'कुरुक्षेत्र' का वाचन किया है। अब आप जानते हैं कि 'कुरुक्षेत्र' के माध्यम से दिनकर ने क्या कहा है और इस कृति की रचना किन परिस्थितियों, मनः स्थितियों तथा प्रेरणाओं का परिणाम है। 'कुरुक्षेत्र' के द्वितीय तथा तृतीय सर्ग का विस्तृत वाचन करने के साथ ही आप इसके संपूर्ण कथासार से भी परिचित हो चुके हैं। इकाई 37 में हम "कुरुक्षेत्र" के वस्तुपक्ष का विवेचन करेंगे। इसके अंतर्गत कथावस्तु व्यंजना नूतन उद्भावनाओं और वैचारिक दृष्टि संकेतों के साथ चरित्रों पर भी विचार किया जाएगा। इसके अतिरिक्त भाव सृष्टि, रस विधान, प्रकृति चित्रण, वैचारिक चेतना आदि की दृष्टि से "कुरुक्षेत्र" को जाँचने-परखने का प्रयास भी किया जाएगा।

37.2 कथानक के स्रोत अथवा आधार

हम पहले भी चर्चा कर चुके हैं कि 'कुरुक्षेत्र' के कथानक में महाभारत के युद्धोत्तर प्रसंगों का आधार ग्रहण किया गया है। युद्ध के उपरांत युधिष्ठिर के मन की खिन्नता, चिंता, अशांति और क्षोभ का प्रसंग महाभारत में कई पर्वों में फैला हुआ है। वह नारद से अपने हृदय की वेदना कहते हैं और पूरी स्थिति-परिस्थिति से हलाश होकर वन जाने को तत्पर होते हैं। किन्तु चारों भाइयों तथा द्रौपदी के समझाने और कृष्ण के परामर्श से वह हस्तिनापुर आते हैं और उनका राज्याभिषेक होता है। श्री कृष्ण के आदेशानुसार वह पितामह के पास जाकर राज्य-धर्म का ज्ञान प्राप्त करते हैं और अनेक विषयों पर विस्तृत चर्चा होती है। पितामह के देहावसान के पश्चात् युधिष्ठिर फिर से मोहग्रस्त होकर शोक-संताप हो जाते हैं। व्यास और श्रीकृष्ण उन्हें हर तरह से समझाने का प्रयास करते हैं। ध्यान रखने की मूल बात यह है कि 'कुरुक्षेत्र' में दिनकर ने शांति पर्व और उद्योगपर्व के कथानक को ही आधार रूप में लिया गया है।

37.3 "कुरुक्षेत्र" का कथा संयोजन

"कुरुक्षेत्र" के कथावस्तु विकास पर ध्यान केंद्रित करते समय कुरुक्षेत्र की भूमिका के रूप में प्रस्तुत कवि के इस कथन पर गौर करना जरूरी है कि—"कुरुक्षेत्र" की रचना भगवान व्यास के अनुकरण पर नहीं हुई और न महाभारत को दोहराना मेरा उद्देश्य था। मुझे जो कुछ कहना था वह भीष्म और युधिष्ठिर का प्रसंग उठाए बिना भी कहा जा सकता था, किन्तु तब यह रचना शायद, प्रबंध के रूप में नहीं उतर कर मुक्तक बन कर रह गई होती। तो भी यह सच है कि इसे प्रबंध के रूप में लाने की मेरी कोई निश्चित योजना नहीं थी। बात यों थी कि पहले मुझे अशोक के निर्वेद ने आकर्षित किया और "कलिंग विजय" नामक कविता लिखते-लिखते मुझे ऐसा लगा, मानो युद्ध की समस्या मनुष्य की सारी समस्याओं की जड़ हो इसी समय द्वापर की ओर देखते हुए मैंने युधिष्ठिर को देखा जो "विजय" इस छोटे से शब्द को कुरुक्षेत्र में बिछी हुई लाशों से तौल रहे थे।

कवि के इस कथन से कई तथ्यों पर एक साथ प्रकाश पड़ता है पहली बात तो यह कि वे 'महाभारत' की कथा की पुनरावृत्ति के उद्देश्य से इस रचना की ओर प्रेरित नहीं हुए। दूसरे, युद्ध को लेकर वह विचारमंथन करना चाहते थे। तीसरे, उनके मन में प्रबंध काव्य की कोई पूर्वनिर्धारित निश्चित योजना नहीं थी। हालाँकि वह मानते हैं कि यदि अपनी बात को कहने के लिए भीष्म और युधिष्ठिर को पात्र स्वरूप में न चुना होता तो भी युद्ध-संबंधी सवालों को उठाया जा सकता था। किन्तु तब यह रचना मुक्तक काव्य के रूप में ही होती। इस तरह निश्चित योजना न होने के बावजूद वह इसमें कहीं न कहीं 'महाभारत' की कथा प्रतीकात्मक आधार ग्रहण करना चाहते हैं। इसलिए अतीत पर निगाह डालते हुए उन्हें धर्मराज युधिष्ठिर दिखाई दिए जो युद्ध की सार्थकता-निरर्थकता को लेकर बेचैन थे। इस तरह भारतीय संस्कृति का एक व्यापक परिदृश्य कवि की चेतना में उभरा और युद्ध जैसी मूलभूत समस्या पर विचार करने के लिए उसने इस व्यापक परिदृश्य को आधार रूप में चुना है।

युद्ध की समस्या मनुष्य की वास्तविक समस्या है। लेकिन जब यह बात किसी विख्यात प्रसंग को लेकर उठाई जाती है तो यह मूलभूत प्रश्न एक मूर्त शक्ल के रूप में खड़ा होता है और मूर्त की संप्रेषणीयता और प्रभाव अमूर्त्त की तुलना में ज्यादा स्पष्ट और गहरा होता है। यह तथ्य कवि के मन में कहीं न कहीं अवश्य रहा होगा इसीलिए उन्होंने सुविख्यात कथानक का आधार ग्रहण किया।

37.3.1 इतिहास और कल्पना का योग

अब प्रश्न यह उठता है कि ऐतिहासिक-सांस्कृतिक कथाप्रसंग को लेकर कवि ने उसके सुविख्यात स्वरूप को यथावत रखा है या उसमें अपनी कल्पना के अनुसार कुछ जोड़ा या छोड़ा है? जहाँ तक युधिष्ठिर के मन के क्षोभ और निर्वेद का प्रश्न है वह 'महाभारत' की

मनोभूमिका को ही प्रस्तुत करता है। किन्तु भीष्म पितामह द्वारा दिए गए उत्तर और समस्याओं द्वारा युद्ध का औचित्य सिद्ध किए जाने में कई पहलुओं से नवीनता का समावेश हुआ है। कृष्ण, व्यास, नारद, द्रौपदी तथा भाइयों के साथ हुई चर्चा को शामिल न करके सारी बात भीष्म के मुख से प्रस्तुत की गई है। नीति-अनीति, धर्म-अधर्म, पाप-पुण्य, न्याय-अन्याय, शांति-क्रांति आदि के औचित्य और अनौचित्य का तार्किक उत्तर भीष्म के माध्यम से दिलाया गया है। कथा द्वापर काल से बाहर निकलती है और युद्ध के प्रश्न को सार्वकालिक परिवेश में रख कर देखा गया है। प्राचीन और वर्तमान यहाँ आकर एकाकार हो जाते हैं। पात्र पीछे छूट जाते हैं और कवि स्वयं बोलता है। वातावरण का जो व्यापक प्रभाव 'महाभारत' के परिप्रेक्ष्य में सृजित किया जा सकता था उसे सृजित करने के बाद कवि को जैसे लगा कि पात्रों के मुख से कहलाना ही पर्याप्त न होगा वैसे ही कवि स्वयं पाठकों के सम्मुख आ गया है। किन्तु जैसा कि स्वयं कवि ने आरंभ में कहा है "सर्वत्र इस बात को ध्यान में रखा है कि भीष्म और युधिष्ठिर के मुख से कोई ऐसी बात न निकल पाए, जो द्वापर के लिए सर्वथा अस्वाभाविक हो। हाँ इतनी स्वतंत्रता अवश्य ली है कि जहाँ भीष्म किसी बात का वर्णन कर रहे हों जो हमारे युग के अनुकूल पड़ती हो, उसका वर्णन नए और विशद रूप से कर लिया जाए।

इससे स्पष्ट है कि कवि इतिहास में कल्पना का समावेश उस हद तक करने का इच्छुक रहा है जहाँ तक काव्य को आधुनिक युग के संवेदन के लिए प्रासंगिक और युगानुकूल बनाया जा सके। जब द्वापर से बिल्कुल अलग प्रसंग में चर्चा हुई तो कवि स्वयं पाठकों के सामने आ गया जैसा कि छठे सर्ग में।

37.3.2 वस्तु-व्यंजना

'कुरुक्षेत्र' की वस्तु व्यंजना पर चर्चा करने से पहले कुछ बातें ध्यान में अवश्य रखनी होंगी। सर्वप्रथम तो कवि का यह कथन कि–"कुरुक्षेत्र' के प्रबंध की एकता उसमें वर्णित विचारों को लेकर है। इससे स्पष्ट है कि कुरुक्षेत्र घटनाप्रधान काव्य न होकर विचारप्रधान काव्य है। अतः घटनाओं की प्रधानता के अभाव में यहाँ कथाविकास में मूल तारतम्यता की उपेक्षा नहीं की जानी चाहिए। कवि का मूल उद्देश्य यहाँ कथा का गायन न होकर विचार-विश्लेषण का प्रतिपादन है। इसलिए इस कृति में कथातत्व काफी क्षीण और सूक्ष्म है।

'कुरुक्षेत्र' प्रबंध की इतिवृत्तात्मकता, वर्णनात्मकता, विवरणात्मकता का इस तरह से निर्वाह नहीं करता जिस तरह से "रामचरितमानस" अथवा "पद्मावत" में एक आधिकारिक कथा चलती है और उसके साथ कई प्रासंगिक कथाएँ। इस प्रकार का पुराना ढंग 'कुरुक्षेत्र' में नहीं है। पूरा कथानक युधिष्ठिर और भीष्म के संवाद, वाद-विवाद, एकालाप और स्वयं कवि द्वारा प्रस्तुत विचारों में सिमटा हुआ है। अतः कथानक में आदि, मध्य और अंत की पारंपरिक संकल्पना यहाँ नहीं मिलती। यहाँ तो कवि ने युद्ध विषयक चिंतन को कथा में ढालने का प्रयास किया है। इसलिए यहाँ विवरण और इतिवृत्त की सरलता और जटिलता न हो कर वैचारिक तार्किकता की प्रधानता है। प्राचीन काल के प्रसंगों को आधार बनाकर उनके माध्यम से अत्याधुनिक विचारों और तर्कों की प्रस्तुति के लिए कवि को कथावस्तु का ताना-बाना विशिष्ट ढंग से बुनना पड़ा है। इसलिए 'कुरुक्षेत्र' के कथानक में एक तरह की संश्लिष्टता और प्रभावान्विति है। सर्वप्रथम तो कवि यह मानकर चलता है कि उसका पाठक 'महाभारत' की कथाओं और अन्य पौराणिक प्रसंगों से भली-भाँति परिचित है। युद्ध की समस्या पर गहन चिंतन इसके वस्तुविन्यास का प्रधान आधार है। अतः कथा युधिष्ठिर के मन की ग्लानि, चिंता, शोक, निर्वेद और उसके समाधान स्वरूप युद्ध के औचित्य विषयक तर्कों को लेकर निर्मित हुई है, लेकिन इस प्रधान कथा के साथ ही अनेक कथाएँ प्रसंगवश स्मृति में कौंधती हैं। द्रौपदी का अपमान, राजसूय यज्ञ, व्यास के वचन, भीम द्वारा दुःशासन वध और नर का रक्त पान, अवश्त्थामा के माथे की मणि का छीना जाना, भीष्म का कौमार्य व्रत आदि जैसी द्वापरकालीन कथाओं के साथ ही रामकथा के अनेक प्रसंग आते हैं जैसे राम का निशाचर वध का प्रण, लंका जाने के लिए समुद्र से विनय फिर क्रोध और अंत में सेतु निर्माण आदि। ये सभी प्रासांगिक कथाएँ स्मृति और उदाहरणों के रूप में चलती हैं। इसके अतिरिक्त विचारों की संश्लिष्टता को स्पष्ट करने के लिए कवि अनेक रूपकों की सृष्टि करता है जैसे युद्ध के भयानक विस्फोट की तुलना में तूफान का रूपक लेते हुए युधिष्ठिर से यह कहना–

"युधिष्ठिर क्या कभी तूफान देखा है

किस तरह आता प्रलय का नाद वह करता हुआ
काल सल वन में द्रुमों को तोड़ता झकझोरता''

इन रूपकों से कथा में वैचारिक-प्रभाव की सृष्टि की गई है। 'कुरुक्षेत्र' के वस्तुविन्यास में दिनकर ने इतिहास को अतिक्रांत करते हुए अनेक काल्पनिक प्रसंगों और प्रकरणों का समावेश किया है। भीष्म जैसे महाबली और अजेय युग-पुरुष से युद्ध के कारणों पर विचार करना, स्वयं आत्मविश्लेषण कराना, मानव सभ्यता के आरंभ और विकास के दौरान संघर्ष की उत्पत्ति और उसके समाधान की व्यवस्था पर विचार करना, आधुनिक युग की समस्याओं को उससे जोड़ देना आदि ऐसे ही कविकल्पित प्रसंग हैं जिनके माध्यम से कवि वैचारिक एकता के निर्वाह में सफल हो सका है। साथ ही इतिहास को नया अर्थ प्रदान करते हुए प्रकरण वक्रता की सृष्टि में सफल हुआ है।

वस्तु निर्वाह में भी कवि ने अपनी वैचारिकता के अनुकूल अपूर्व कौशल का परिचय दिया है। साथ ही कथावस्तु का आरंभ बड़े ही नाटकीय ढंग से हुआ है। विचार और विस्मय के साथ कृति आरम्भ होती है कि इतिहास के उस अध्याय पर कौन रो रहा है जिसमें नौजवानों के लहू का मोल लिखा है।

आरंभ में उठी प्रश्नाकुलता आखिर तक मौजूद रहती है पूरी कथा को प्रश्नों, शंकाओं, समस्याओं से बुना गया है। विजय, देश की लज्जा, अपमान का प्रतिशोध, धर्म, कर्त्तव्य, नीति, क्रांति आदि शब्दों के अर्थ ही जटिलताओं को सुलझाने में कवि आद्यंत व्यस्त रहा है। इसीलिए यह कथा युद्ध के संघर्षों अंतर्विरोधों और तनावों से निर्मित हुई है। सामने कुछ घटित नहीं हो रहा है लेकिन जो घट चुका है उससे जुड़े अनेकानेक प्रश्न हैं जो अपने जटिलतम रूप में सामने खड़े हैं।

नाटकीय आरंभ के साथ जो विषाद पूर्व ग्लानि और तनाव युधिष्ठिर के मन में पैदा होता है वह ''नियति के व्यंग्य भरे अर्थ'' गुनता हुआ संपूर्ण काव्यपरिवेश में फैल जाता है। युद्ध के परिणामस्वरूप उत्पन्न आर्त्तनाद से युधिष्ठिर के भीतर उठी आत्मवेदना उन्हें भागने को यह कहकर मजबूर करती हैं कि युद्ध इन पाँच पुरुषों के अभिमान और लोभवृत्ति का परिणाम था। युद्ध से पहले यदि कहीं वह इस भयंकर संहार की कल्पना तक कर पाते तो शांति को जिस कीमत पर मिलती खरीद लेते।

युधिष्ठिर की वेदना से उत्पन्न तनाव को भीष्म के तर्कों से एक सही दिशा-दृष्टि मिलती है। पर युद्ध के वास्तविक कारणों का पता चलता है और कथानक आगे बढ़ता है। तूफान के रूपक से समाज में व्याप्त युद्ध की आग का प्रत्यक्ष रूप सामने आता है। वैर, प्रतिशोध, घृणा, अत्याचार की जब सीमा टूट जाती है तो किसी न किसी रूप में युद्ध का विस्फोट होत है। इस तरह के वार्तालाप में युद्ध की अपरिहार्यता और उसकी निरर्थकता दोनों के पक्ष में अकाट्य तर्क काफी देर तक चलते हैं। भीष्म कायरता और अन्याय पर खड़ी शांति की भर्त्सना करते हैं छठे सर्ग में कथा वैज्ञानिक युग में प्रवेश कर जाती है। प्राचीन काल से लेकर आज तक बुद्ध, अशोक, ईसा मसीह, गांधी आदि द्वारा किए गए प्रयासों पर कवि विचार करता है और ईश्वर से प्रार्थना करता हुआ प्रश्न है कि कब मनुष्य अपनी पुरानी युद्ध की राह छोड़ेगा। मनुष्य की वैज्ञानिक प्रगति के महत्व को स्वीकार करता हुआ कवि यह चेतावनी देता है कि यदि विज्ञान विनाश के लिए तलवार का काम करता है तो उसे छोड़ दिया जाना चाहिए। उसका प्रयोग रचनात्मक कार्यों के लिए होना चाहिए सर्वनाश के लिए नहीं।

अंत में, भीष्म समझाते हैं कि रण का कोलाहल तभी शांत हो सकता है जब सभी मनुष्यों को सुख में समान हिस्सा मिले। इस तरह कथानक का अंत इस आशापूर्ण निष्कर्ष पर पहुँच कर होता है कि एक दिन मनुष्य अपनी भूल को पहचानेगा तथा स्नेह और बलिदान पर आधारित समतावादी समाज की स्थापना होगी। शंकाओं, तनावों, प्रश्नाकुलताओं का अंत उज्ज्वल भविष्य की आशा में होगा।

37.3.3 कथानक में नूतन उद्भावनाएँ

'कुरुक्षेत्र' के कथानक में नए संदर्भों और प्रसंगों का समावेश कवि ने दो प्रकार से किया है। कुछ उद्भावनाएँ तो एकदम प्रत्यक्ष रूप में सामने आई हैं और कुछ की प्रतिध्वनि अप्रत्यक्ष रूप से सुनाई देती हैं।

कुरुक्षेत्र के कथानक की प्रमुख नूतन उद्‌भावनाएँ हैं–

1) प्राचीन कथा को आधुनिक अर्थवत्ता से जोड़ना, 2) इतिहास का प्रयोग संवाद सेतु के रूप में करना, 3) पौराणिक ऐतिहासिक संदर्भों को वैज्ञानिक दृष्टि और दृश्य प्रदान करना, 4) उन्हें आधुनिक विचार से तर्क संपृक्त करना, 5) विशिष्ट घटनाओं को कालातीत रूप देना आदि।

इन उद्‌भावनाओं पर विचार करते हुए हमें कुरुक्षेत्र के रचनाकाल की युगीन पृष्ठभूमि और दिनकर की मनोभूमिका की बनावट को ध्यान में रखना होगा। बीसवीं शताब्दी विज्ञान की अनुपम उपलब्धियों के साथ ही उसकी चरम विनाशलीला को दो विश्वयुद्धों के रूप में देख चुकी थी। साम्राज्यवादी शक्तियों की लूट अन्याय और अत्याचार के साथ ही उसकी चेतना में हिरोशिमा और नागासाकी के आणविक युद्ध की स्मृति बिल्कुल ताजा थी। दूसरी ओर रूस की बोल्शेविक क्रांति और उसके परिणामस्वरूप पनपी साम्यवादी चेतना की लहर भी दुनिया भर में काफी तेजी से फैल रही थी। गांधी जी के अहिंसा दर्शन और तिलक के गीता पुष्ट कर्मयोग ने एक विशिष्ट ढंग से कर्म चेतना को उन्नत किया था जो राजनीतिक क्रांति के स्तर पर नरमदल और गरमदल के रूप में प्रकट हुई थी। कुरुक्षेत्र ने हमें इन युद्धों, आंदोलनों, वैचारिक द्वंद्वों और उनके परिणामों की स्पष्ट अनुगूँज मिलती है और इसी अनुगूँज को लाने के लिए कवि ने 'महाभारत' की कथा में नवीन उद्‌भावनाओं की सृष्टि की है। छठे सर्ग में कवि बुद्ध, अशोक, ईसामसीह, गांधी आदि के प्रति श्रद्धा के बावजूद मनुष्य द्वारा उनके मार्ग को छोड़े जाने की स्थिति पर विकल होता है। विज्ञानयुग के युद्ध के प्रति मनुष्य को आगाह करता हुआ मानवतावादी मूल्यों की पुकार करता है। भीष्म और युधिष्ठिर के माध्यम से वह गांधी और सुभाष के मतों को सामने रखता है। भीष्म के कथनों में जगह-जगह मार्क्स के साम्यवादी विचार-दर्शन की प्रतिध्वनि सुनाई देती है। इस तरह दिनकर क्षात्रधर्म को साम्य पर आधारित समाज की स्थापना के उद्देश्य से जोड़ते हैं। भावना और बुद्धि की टकराहट पूरे कथानक में चलती है। मनुष्य यहाँ अपने प्रश्नों से बिंधा खड़ा है। आरंभ से लेकर अंत तक युद्ध के प्रश्न को लेकर बौद्धिक मंथन ही इस कथावस्तु की विशेषता है।

बोध प्रश्न 1

1 क) 'कुरुक्षेत्र' में 'महाभारत' के किन पर्वों को कथा का आधार बनाया गया है?

.....

.....

.....

.....

.....

.....

ख) क्या 'कुरुक्षेत्र' की रचना 'महाभारत' के अनुकरण पर हुई है? यदि नहीं तो दिनकर का क्या उद्देश्य था?

.....

.....

.....

.....

.....

.....

ग) दिनकर ने यदि 'महाभारत' का प्रसंग न लिया होता तो उन्हें क्या कठिनाई होती?

.....

.....

.....

.....

घ) कल्पना का समावेश करते समय दिनकर ने किस बात का ध्यान रखा है?

.....

.....

.....

.....

.....

.....

2 'हाँ' या 'नहीं' में उत्तर दीजिए–

क) 'कुरुक्षेत्र' घटना प्रधान काव्य है। ( )

ख) 'कुरुक्षेत्र' में कथा तत्व काफी क्षीण है। ( )

ग) 'कुरुक्षेत्र' के कथानक में कई प्रासंगिक कथाएँ साथ-साथ चलती हैं। ( )

घ) 'कुरुक्षेत्र' का कथानक इतिवृत्त प्रधान है। ( )

ङ) 'कुरुक्षेत्र' का कवि यह मान कर चलता है कि पाठक 'महाभारत' की विभिन्न कथाओं से भलीभाँति परिचित है। ( )

3 रिक्त स्थानों की पूर्ति कोष्ठक में से सही शब्द चुन कर कीजिए–

क) 'कुरुक्षेत्र' के कथानक का आरंभ.....है। (घटना प्रधान/नाटकीय)

ख) 'कुरुक्षेत्र' में कवि युद्ध की तुलना..... करता हैं। (बाढ़/विस्फोट/तूफान)

ग) दिनकर विज्ञान का प्रयोग मानवता के.....के लिए करने के पक्ष में है। (कल्याण/विध्वंस/ऐश्वर्य)

37.4 चरित्र चित्रण

आप पढ़ चुके है कि 'कुरुक्षेत्र' विचारप्रधान प्रबंध काव्य है उसमें घटनाओं को महत्व नहीं दिया गया है। फलतः इस कृति के कथातत्व का प्रभाव रचना के पात्रविधान पर पड़ा है। घटनाओं के अभाव में पात्रों के बाह्य कार्य व्यापार के स्थान पर उनके मन-मस्तिष्क को अधिक महत्व प्राप्त होता है। द्वंद्व की सृष्टि उनके कार्यों से अधिक उनके विचारों में होती है। ऐसी स्थिति में पात्रों की ज्यादा संख्या होने की संभावना भी नहीं रहती। जयशंकर प्रसाद द्वारा रचित महाकाव्य "कामायनी" में केवल तीन-चार पात्र हैं। 'कुरुक्षेत्र' में भी ऐसा ही हुआ है। प्रत्यक्ष रूप से केवल दो पात्र उपस्थित हुए हैं युधिष्ठिर और भीष्म। इन्हीं के संवादों तथा स्वयं कवि के वक्तव्य के द्वारा कथा आगे बढ़ी है और वस्तुविन्यास का कलात्मक ढंग से विस्तार हुआ है। सूच्यरूप में 'महाभारत' के अन्य पात्रों पांडवों, कौरवों, धृतराष्ट्र, द्रोणाचार्य, अभिमन्यु, उत्तरा, गांधारी, कृष्ण आदि का उल्लेख भर किया गया है।

घटना प्रधानता के अभाव में पारंपरिक ढंग से नायक प्रतिनायक आदि की परिकल्पना भी 'कुरुक्षेत्र' में सुलभ नहीं है। भीष्म और युधिष्ठिर में किसे नायक कहा जाए यह बताना सर्वथा असंभव है। दोनों पात्र दो विचारधाराओं का प्रतिनिधित्व करते हैं और 'करुक्षेत्र' चिरन्तनयुद्ध की समस्या का। डॉ. नगेन्द्र का मत है कि–

"इस काव्य में कुरुक्षेत्र युद्ध का प्रतीक है.....युधिष्ठिर अहिंसा के प्रतीक जो युद्ध को किसी भी परिस्थिति में उचित नहीं समझते और भीष्म न्याय भावना के प्रतीक हैं जो अन्याय के दमन के लिए युद्ध को उचित ही नहीं वरन् आवश्यक भी मानते हैं। वास्तव में, नायकत्व का प्रश्न काव्य में प्रच्छन्न ही रह जाता है" (विचार और विश्लेषण, पृ. 128)

जहाँ तक चरित्र के स्वतंत्र विकास का संबंध है वह भीष्म और युधिष्ठिर का भी नहीं हो सका है। क्योंकि दोनों दो विचारधाराओं का प्रतिनिधित्व करने के लिए सृजित किए गए हैं। अतः दोनों ही कवि के चिंतन के संवाहक बन कर आए हैं। अतः दोनों चरित्रों का विश्लेषण उपर्युक्त तथ्यों का ध्यान में रखते हुए करना होगा। आगे हम दोनों की चारित्रिक विशेषताओं का विवेचन करेंगे।

37.4.1 युधिष्ठिर

धर्मराज का पारंपरिक चरित्र 'कुरुक्षेत्र' में कायम रहा है। उनकी मनोदशा को कवि ने बड़े ही मर्मस्पर्शी ढंग से प्रस्तुत किया है। युधिष्ठिर की आत्मग्लानि, उनकी आत्म-भर्त्सना, दैन्य, क्षोभ, निराशा, व्याकुलता आदि बड़े ही प्रभावपूर्ण ढंग से व्यक्त हुए हैं। उदाहरणार्थ युधिष्ठिर के निम्नलिखित का वचन उनकी व्यथा का बड़ा ही करुण चित्र उपस्थित करते हैं–

"हाय, पितामह, हार किसकी हुई है यह?
ध्वंसअवशेष पर सिर धुनता है कौन?
कौन भस्मराशि में विफल सुख ढूँढता है?
लपटों से मुकुट का पट बुनता है कौन?
और बैठ मानव की रक्त सरिता के तीर
नियति के व्यंग्य भरे अर्थ गुनता है कौन?
कौन देखता है शवदाह बंधु बांधवों का?
उत्तरा का करुण विलाप सुनता है कौन?

यहाँ हम युधिष्ठिर को दया, करुणा, उदारता, सहिष्णुता, सहानुभूति आदि श्रेष्ठ मानवीय गुणों से संपन्न पाते हैं। दूसरों को दुखी देखकर वे विजयोल्लास में शामिल नहीं हो सकते जबकि उनके अन्य बंधुगण इसमें आत्मविभोर हैं।

उनकी परदुःख कातरता उन्हें आत्मग्लानि से भर देती है और वे सोचते हैं कि केवल पाँच असहिष्णु पांडवों के कारण इतना भीषण नरसंहार हुआ है। अपने इन सद्विवेकपूर्ण भावों के कारण ही उनका मन अंतर्द्वंद्वग्रस्त दिखाई देता है। गीता के कर्म दर्शन और वीरता के बीच क्या नीति पूर्ण है अथवा नहीं। इस बात को लेकर धर्मराज का मन द्वंद्वग्रस्त है–

"एक और सत्यमयी गीता भगवान की है,
एक ओर जीवन की विरति प्रबुद्ध है।
× × × ×
ध्वंस जन्य सुख? याकि, साश्रु दुःख शांतिजन्य?
ज्ञात नहीं कौन बात नीति के विरुद्ध है,
जानता नहीं मैं कुरुक्षेत्र में लिखा है पुण्य,
या महान पाप यहाँ फूटा बन युद्ध है"

आगे चल कर वह महसूस करते हैं कि युद्ध का कारण राजसिंहासन का लोभ है और वह इस लोभ से लड़ने के लिए संकल्पबद्ध हो जाते हैं। उन्हें आशा है कि लोभ के विरुद्ध इस संघर्ष में वे अवश्य विजयी होंगे।

युधिष्ठिर के करुणा, दया, प्रेम और लोक कल्याण के भावों के प्रति भीष्म के हृदय में भी सम्मान है। लेकिन वह मानते हैं कि यह भाव होना ही पर्याप्त नहीं है न्यायपूर्ण समानता की व्यवस्था भी आवश्यक है।

युधिष्ठिर के चरित्र में भावाकुलता, आवेश और चिंतनशीलता का आग्रह बहुत है। मूलतः यह यथार्थ चरित्र है जो आधुनिक युद्ध की विभीषिकाओं से पीड़ित और घबराए हुए मनुष्य का प्रतिनिधित्व करता है। युद्ध के सर्वनाश को देख कर जिसका हृदय विदीर्ण हो उठता है।

निष्कर्ष में कहा, जा सकता है कि युधिष्ठिर का चरित्र कवि के मानवतावादी दृष्टिकोण का परिचायक है। उनके विचारों पर गांधी विचार-दर्शन का प्रभाव है।

37.4.2 भीष्म

'कुरुक्षेत्र' में प्रतिपादित युद्ध संबंधी वाद-विवाद में भीष्म युद्ध के पक्ष में बोलते हैं। भीष्म के चरित्र में उनके इतिहास प्रसिद्ध उदात्त व्यक्तित्व तथा कवि की आधुनिक दृष्टि का मेल है। उनसे पाठक का प्रथम परिचय ही अजेय, पराक्रमी, दृढ़ प्रतिज्ञ नीतिद्ध और तत्व ज्ञानी के रूप में कराया गया है। ये शरशैया पर अर्जुन के बाणों से नहीं, स्नेह से पराजित होकर लेटे हैं। वे धैर्य, आत्मसम्मान, न्याय, कर्मयोग और लोक कल्याण के मूल्यों का प्रतीक हैं और इन मूल्यों की रक्षा के लिए युद्ध को आवश्यक मानते हैं। उनका विचार है कि–

"चुराता न्याय जो रण को बुलाता भी वही है,
"जब तक मनुष्य का यह
सुख भाग नहीं सम होगा,
शमित न होगा कोलाहल
संघर्ष नहीं कम होगा।

कर्म सौन्दर्य को प्रधान मानने वाले भीष्म भाग्यवाद की भर्त्सना करते हैं। उनका मानना है कि भाग्यवाद के बहाने ही व्यक्ति अपना अहित कर लेता है और दूसरों का शोषण।

भाग्यवाद आवरण पाप का
और शस्त्र शोषण का।
जिससे रखता दबा एक जन
भाग दूसरे जन का।

संन्यास और विरक्ति को वह कार्य से बचने का तरीका समझते हैं। इसलिए उसे पलायन और कायरता का दुर्भाग्यपूर्ण दर्शन मानते हैं–

धर्मराज संन्यास खोजना
कायरता है मन की
है सच्चा मनुजत्व ग्रंथियाँ
सुलझाना जीवन की।

जिस तरह युद्ध से पहले कृष्ण ने अर्जुन को कर्मयोग का उपदेश दिया था उसी तरह अब भीष्म, युधिष्ठिर को समझाते हैं कि उन्हें संन्यास की बात छोड़कर जीवन में सक्रियकर्म सौन्दर्य की ओर प्रवृत्त होना चाहिए। यह कर्त्तव्य-मार्ग और लोक-कल्याण और परदुःखहरण का मार्ग है। मानवमात्र को सुखी बनाने के लिए पर्याप्त कष्ट झेलना ही मनुष्य की सच्ची वीरता है। इसलिए वह कहते हैं कि क्षमा, तप, त्याग उस वीर को ही शोभा देते हैं जो पराक्रमी है और प्रतिशोध लेने में सक्षम है। यथा–

क्षमा शोभती उस भुजंग को
जिसके पास गरल है
उसको क्या, जो दंतहीन–
विषरहित विनीत सरल है।

अन्याय और शोषण पर आधारित शांति का भीष्म डटकर विरोध करते हैं और ऐसी शांति को भंग करना ही अपना कर्त्तव्य-कर्म समझते हैं–

पातकी न होता प्रबुद्ध दलितों का खड्ग
पातकी बताना उसे दर्शन की भ्रांति है"।

भीष्म पितामह के बहिर्मन के साथ-साथ उनके अंतर्मन का चित्र भी कवि ने खींचा है। वस्तुतः उनके व्यक्तित्व का यह स्वरूप दिनकर की नई अवधारणा है। 'कुरुक्षेत्र' के युद्ध के लिए वह कई प्रकार से अपने आप को उत्तरदायी मानते हैं। आजीवन कौमार्य का जो व्रत उन्होंने लिया था उसके कारण उनके व्यक्तित्व का कर्त्तव्य और नीति पक्ष प्रबल हो गया पर स्नेह पक्ष अपेक्षाकृत पिछड़ा रहा। इसलिए अब जीवन की संध्या बेला में वह सोचते हैं कि यदि उनके व्यक्तित्व का स्नेह पक्ष भी उतना ही प्रबल होता तो जीवन में उनके निर्णय और प्रतिक्रियाएँ संभवतया भिन्न होतीं। यहाँ आकर हम भीष्म के चरित्र में भी एक प्रकार का अंतर्द्वंद्व देखते हैं–

धर्मराज अपने कोमल
भावों की कर अवहेला
लगता है मैंने भी जग को
रण की ओर ढकेला

अथवा

ब्रह्मचर्य के दिन जो
रुद्ध हुई थी धारा,
कुरुक्षेत्र में फूट उसी ने
बनकर प्रेम पुकारा

नीति यानी कर्त्तव्य और स्नेह दोनों में से वह नीति को सदैव स्नेह से ऊपर रखते रहे और उस समय चुप रहे जब उन्हें पांडवों के पक्ष में बोलना चाहिए था। ऐसा इसलिए हुआ कि–

"बुद्धि शासिका थी जीवन की
अनुचर मात्र हृदय था"

हृदय और बुद्धि का संतुलन न होने पर एक पक्ष प्रबल हो जाता है और मनुष्य सहज व्यवहार के स्थान पर कृत्रिमता ओढ़ लेता है। जिसके परिणामस्वरूप 'कुरुक्षेत्र' की भाँति भीषण हो सकते हैं।

भीष्म के इस आत्मविश्लेषण ने उनके चरित्र को सहज मानवीयता प्रदत्त की है। जन कल्याण के लिए युद्ध और क्रांति के पक्षधर के रूप में वह उस आधुनिक मानवतावादी दृष्टि के परिचायक हैं जो समष्टि हित के लिए व्यष्टि सुखों के बलिदान को श्रेयस्कर मानती हैं।

भीष्म के चरित्र में आत्म गौरव और अंगार जैसी वीरता राष्ट्रीय-सांस्कृतिक जीवन के आत्म सम्मान और आत्म विश्वास की परिचायक है। इसमें शौर्य और उदात्तगुणों का अदभुत योग है।

कहा जा सकता है कि भीष्म पितामह भारतीय क्रांतिकारी परंपरा के वैचारिक प्रतीक हैं। स्वाधीनता-संग्राम के दौरान क्रांतिकारी विचारधाराओं ने जिस युद्धदर्शन को जीवन के केंद्र में स्थापित किया है उस चेतना की संपूर्ण अभिव्यक्ति भीष्म के माध्यम से हुई है। वह कवि के अपने विचारों के संवाहक है। यहाँ कवि का व्यक्तित्व भीष्म में तदाकार हो गया है।

37.4.3 'कुरुक्षेत्र' के चरित्र विधान की विशेषताएं

'कुरुक्षेत्र' के दोनों पात्रों के ऐतिहासिक व्यक्तित्व में आधुनिक वैचारिक चेतना का समावेश बहुत ही कुशलता से हुआ है।

दिनकर ने चरित्रों के बाह् व्यक्तित्व के निरुपण के साथ ही अंतर्मन को बड़े ही मनोवैज्ञानिक ढंग से खोलकर सामने रख दिया है। करुणा, पश्चाताप, ग्लानि, आत्ममंथन आत्मविवेक, आत्मविश्लेषण चिंतन-मनन आदि के द्वारा युधिष्ठिर और भीष्म के व्यक्तित्व को पर्त दर पर्त खोला गया है। चेतन और अवचेतन मन के और व्यक्ति के जीवन और कर्मों पर उनके प्रभाव को भी बड़ी तार्किकता से प्रस्तुत किया गया है।

ऐसी स्थिति के कारण पात्रों के चरित्र के वैयक्तिक और सामाजिक दोनों पक्ष गहराई से उद्घाटित हुए हैं।

चरित्रों में गांधी, सुभाष, मार्क्स ओर फ्रायड आदि के विचारों की अनुगूंज सुनाई देती है। भीष्म और युधिष्ठिर के वैचारिक टकराव में गांधी और सुभाष का वैचारिक संघर्ष उभर कर सामने आया है।

जहाँ एक ओर भीष्म के अंतर्मन और बहिर्व्यक्तित्व को संश्लिष्ट रूप प्रदान करने के लिए इतिहास, मनोविज्ञान और आधुनिक प्रगतिशील चिंतन को बड़े कौशल के साथ परस्पर गूंथा गया है। वहीं दूसरी ओर युधिष्ठिर की मनः स्थिति के माध्यम से आधुनिक मनुष्य की द्विधा, यातना, तनाव, चिंता और प्रश्नाकुलता को भी प्रकट किया गया है।

विशेषता यह है कि आधुनिक युग के अनुरूप बनने में इन दोनों पात्रों ने अपनी ऐतिहासिकता नहीं खोई है।

बोध प्रश्न 2

क) 'कुरुक्षेत्र' में पात्रों की संख्या ज्यादा क्यों नहीं हो सकती थी?

.....

.....

.....

.....

ख) क्या कुरुक्षेत्र में कोई नायक है? यदि नहीं तो क्यों?

.....

.....

.....

.....

ग) भीष्म के चरित्र में दिनकर ने किस नयी अवधारणा का समावेश किया है?

.....

.....

.....

.....

घ) कुरुक्षेत्र के पात्र विधान में किन विचार धाराओं की अनुगूँज सुनाई देती है?

.....

.....

.....

.....

2 युधिष्ठिर के चरित्र में निम्नलिखित में से कौन सी विशेषताएं नहीं हैं सही (✓) और गलत (✗) का निशान लगा कर उतर दीजिए।

क) दया

ख) उदारता

ग) सहानुभूति

घ) असहिष्णुता

ङ) प्रश्नाकुलता

च) भावहीनता

37.5 प्रकृति एवं संवेदना

'कुरुक्षेत्र' की केंद्रीय संवेदना युद्ध की समस्या से संबंधित विचार मंथन की है। प्रकृति का समावेश कविता में नए विचारों की अभिवयक्ति, विश्लेषण और पुष्टि के रूप में ही हुआ है। पर मात्र प्रकृति निरूपण का यहाँ कोई अवसर नहीं है। यद्यपि एक स्वतंत्र सत्ता के रूप में प्रकृति की स्थिति को स्वीकार करते हुए उसके विविध रूपों को विभिन्न प्रकार से प्रस्तुत किया गया है। प्रकृति को विविध रूपकों के द्वारा कवि ने विशिष्ट स्थितियों और मनः स्थितियों के रूप में प्रस्तुत किया है। उदाहरणार्थ उसके रौद्र और भीषण रूप के माध्यम से महायुद्ध की भीषणता को प्रकट किया गया है–

"औ" युधिष्ठिर से कहा–तूफान देखा है कभी?
किस तरह आता प्रलय का नाद वह करता हुआ,
काल सा वन में द्रुमों को तोड़ता, झकझोरता

और मूलोच्छेद कर भू पर सुलाता क्रोध से
उन सहस्त्रों पादपों को जो कि क्षीणाधार हैं
रूध शाखाएं दुमों की हरहरा कर टूटतीं,
टूट गिरते शावकों के साथ नीड़ विहंग के,
अंग भर जाते वनानी के निहित तरू, गुल्म से,
छिन्न फूलों के दलों से पक्षियों की देह से
पर शिराएँ जिस महीरूह की अतल में हैं गड़ीं
वह नहीं भयभीत होता क्रूर झंझावात से
शीष पर बढ़ता हुआ तूफान जाता है चला,
नोचता कुछ पत्र या कुछ डालियों को तोड़ता"

यहां कवि प्रकृति की घटनाओं के माध्यम से इस तथ्य को प्रकट करता है तूफान में वे सभी पेड़ पौधे जीव जंतु नष्ट हो जाते हैं जो कमजोर होते हैं। किंतु जिस वृक्ष की जड़ें गहरी हैं उसे तूफान नष्ट नहीं कर पाता। उसके कुछ पत्तों और शाखाओं को झकझोरने तोड़ने के सिवाए तूफान कुछ नहीं कर पाता। ये पंक्तियाँ डार्विन के शक्ति के सिद्धांत को प्रस्तुत करती हैं। दिनकर का संपूर्ण जीवन दर्शन शौर्य और पराक्रम का दर्शन है जिसमें शक्ति और कर्म सौन्दर्य की स्थापना को महत्व दिया गया है। प्रकृति का भी ऐसा ही दृश्य उपस्थित किया गया है। जिसमें तूफान के प्रचंड वेग को सहने के बाद वन के वैधव्य का दृश्य देखता हुआ वृक्ष विचार करता है कि प्रकृति तूफान क्यों भेजती है। उसकी स्थिति वैसी ही होती है जैसी युधिष्ठिर की। उसे नहीं पता कि वायुमंडल में अत्यधिक गर्मी हो जाने पर तूफान के रूप में उसका विस्फोट अनिवार्य होता है। इस तरह युद्ध के कारणों का सजीव चित्र प्राकृतिक तथ्य के उदाहरण के माध्यम से खींचा गया है।

लेकिन ऊपर जो डार्विन के शक्ति-सिद्धांत का जो उदाहरण है उसका आशय यह नहीं समझना चाहिए कि कवि प्रकृति के माध्यम से केवल सबल को ही जीने और भोगने का अधिकार सिद्ध करना चाहता। कवि का मानना है कि सम्मानपूर्वक जीने के लिए शक्ति और वीरता चाहिए।

दिनकर ने प्रगतिशील-सामाजिक स्वाधीनता की दृष्टि से प्रकृति चित्रण किया है। वह बराबर इस बात पर विचार करते रहते हैं कि प्रकृति का सहभाव ही मनुष्य की शक्ति है और प्रकृति पर विज्ञान के द्वारा विजय की तैयारी किसी बड़ी विपदा को आमन्त्रण। 'कुरुक्षेत्र' के छठे सर्ग में प्रकृति, मनुष्य और विज्ञान के संबंध की समस्या को उठाया गया है। दिनकर की मूल चिंता यह है कि विज्ञान की अग्नि से जलती हुई पृथ्वी के प्राण कोमलता और सरलता को कैसे सुरक्षित रख सकते हैं। जब तक मनुष्य की उद्दाम भोग लालसाएं अनियंत्रित रहेंगी। मानव के प्राणों में शीललता व्याप्त नहीं हो सकती।

कारण

"आप की दुनिया विचित्र नवीन
प्रकृति पर सर्वत्र है विजयी पुरुष आसीन
हैं बंधे नर के करों में वारि विद्युत माप
हुक्म पर चढ़ता उतरता है पवन का ताप
हैं नहीं बाकी कहीं व्यवधान
लाँघ सकता नर सरित गिरिसिंधु एक समान"

छायावादी कृति "कामायनी" में प्रकृति के अत्याचारों से पीड़ित होकर विद्रोह करती है किंतु "कुरुक्षेत्र" में दिनकर प्रकृति की एक सर्व शक्तिमान सत्ता को ही स्वीकारते हैं। और इस भय से आग्राह करते हैं कि यदि मनुष्य ने प्रकृति को पूरी तरह से दासी बनाने की तैयारी की तो प्रकृति अपने विकराल रूपों में सामने आ सकती है। इसलिए दिनकर की स्मृति में आदिम प्रकृति की कौंध के चित्र काफी तादात में मिलते हैं जैसे–

चाँदनी की रागिनी कुछ और की मुस्कान
नींद में भूली हुई बहती नदी का गान
रंग में घुलता हुआ खिलती कली का राग
पत्तियों पर गूंजती कुछ ओस की आवाज"

दिनकर के इस तरह के प्रकृति चित्रों के आधार पर विद्वान यह मानते हैं कि छायावाद के समानांतर राष्ट्रीय-सांस्कृतिक धारा के अन्तर्गत दूसरा छायावाद चला था जिसके कवि हैं–बच्चन, दिनकर, माखनलाल चतुर्वेदी, भगवतीचरण वर्मा, नरेन्द्र शर्मा आदि। इन सभी

में राष्ट्रीय जागरण युग की देश-प्रेम-भावना ही प्रकृति प्रेम-भावना में बदल गई है। परिणामस्वरूप फूल, कली, रस, रूप, रंग के भाव इन कवियों की कविताओं में बहुतायत से आए हैं। और युद्ध का समर्थन करने पर भी इनकी मूल चिंता धरती की कोमलता (करुणा और रस) को हर कीमत पर रक्षित करने की रही। दिनकर से एक उदाहरण लीजिए–

"यह धरती फल फूल अन्न धन
रतन उगलने वाली
यह पालिका मृगव्य जीव की
अटवी सघन निराली

तुंग शृंग ये शैल कि जिनमें
हीरक रत्न भरे हैं।
ये समुद्र जिनमें मुक्ता
विद्रुम प्रवाल बिखरे हैं।

यह प्रकृति इसी अर्थ में वसुंधरा है कि मनुष्य के श्रम से रत्न उगलती है। प्रकृति के इस मातृत्व वैभव का वर्णन देशभक्ति और नवजागरण की चेतना का सीधा विस्फोट है एक अन्य उदाहरण लीजिए–

प्रकृति नहीं डर कर झुकती है
कभी भाग्य के बल से
सदा हारती वह मनुष्य के
उद्यम से श्रम जल से।

इस प्रकार दिनकर ने प्रकृति का संवेदनात्मक और प्रतीकात्मक दोनों रूपों में मुक्त हृदय से चित्रण किया है। शास्त्रीय भाषा में इसे आलंबन रूप में प्रकृति चित्रण भी कह सकते हैं। ध्यान रखने की बात यह है कि प्रकृति चित्रण मात्र कर देना दिनकर का उद्देश्य नहीं है उनका उद्देश्य है उपनिषद दर्शन से फूटी उस विचारधारा को प्रस्तुत करना जिसमें प्रकृति और उसके सौंदर्य की महिमा का अनेक रूपों में वर्णन है। इसलिए दिनकर विज्ञान के तांडव नृत्य से काँपते हैं–

प्रकृति की प्रच्छन्नता को जीत
सिंधु से आकाश तक सबको किए भयभीत

X X X

लक्ष्य क्या? उद्देश्य क्या? क्या अर्थ?
यह नहीं यदि ज्ञात तो विज्ञान की श्रम व्यर्थ
सुन रहा आकाश चढ़ ग्रह तारकों का नाद
एक छोटी बात ही पड़ती न तुझको याद

जाहिर है कि दिनकर प्रकृति को 'रौंद देने वाला' पश्चिमी दर्शन स्वीकार नहीं करते। वह उस भारतीय दर्शन की ओर झुकते हैं जिसका मूल आधार है भावुक हृदय लेकर ही मनुष्य प्रकृति रूपी मां से कुछ पा सकता है। इसें प्रकृति के प्रति स्वच्छंदतावादी दृष्टि ही कहा जा सकता है। प्रकृति की रम्यता में दिनकर का मनुष्य उन्मुक्त स्वच्छदता का दर्शन करता है। कारण वह स्वाधीनता की तलाश में प्रकृति की ओर आया है।

37.6 भाव-रस व्यंजना

"कुरुक्षेत्र" में परंपरागत पद्धति का रसविधान नहीं है। रस का पुराना दर्शन इसलिए भी खंडित हो गया है कि दिनकर भाव सामंजस्य की ओर नहीं बढ़ते। वह निरंतर तर्क और विचार के द्वैत में दहकते रहते हैं। आनंदवादी जीवन मूल्य 'कुरुक्षेत्र' में प्रवेश नहीं कर सके क्योंकि कवि बौद्धिक धरातल एक जटिल समस्या से झूझ रहा है। पहले तो "कुरुक्षेत्र" में विभाव, अनुभाव और संचारी भाव की स्थितियाँ ही पुष्ट नहीं है। इसलिए किसी भी रस को 'कुरुक्षेत्र' का अंगीरस मानना भ्रामक होगा। अंगीरस वह रस होता है। जो कथा के कलेवर में आदि से अंत तक अखड रूप में विद्यमान रहता है और नायक की चित्तवृतियों का प्रतिफलन भी अंगीरस में ही होता है। 'कुरुक्षेत्र' में पहले तो यही निर्णय करना कठिन है कि इसका नायक कौन है? दूसरे इस कृति में रस के विभाव पक्ष की अंखडता का अभाव

है। तीसरी बात यह है कि कृति में अनुभावों और संचारी भावों के जहां-तहां विधान किए गए हैं। अद्‌भुत, हास्य और श्रृंगार का इसमें लगभग अभाव है और रौद्र, शांत करुण, भयानक वीभत्स, वीर आदि रसों में उत्पन्न होने वाले भाव मात्र भाव बन कर ही रह गए हैं। रस रूप में उनकी परिणति नहीं हो सकी। कहीं-कहीं जुगुप्सा, उत्साह और निर्वेद के भाव प्रबलता से उभरे हैं किंतु शास्त्रीय दृष्टि से यह कहना संभव नहीं है कि उत्साह नामक स्थायीभाव ने वीर रस की निष्पति की है या निर्वेद नामक स्थायी भाव ने शांत रस में पर्यावसान पाया है "कुरुक्षेत्र" में रससिद्धि इसलिए भी नहीं हो पायी कि यह रचना युद्ध समाप्त हो जाने के बाद के चिंतन का संवादात्मक खमीर बन जाती है। विचारों के अपने-अपने पक्ष हैं और घायल हृदयों के अपने-अपने समाधान। मूल बात यह है कि भीष्म और युधिष्ठिर दोनों के आधार से कवि ने अपने मन के दो पक्षों को ही व्यक्त किया है। इसलिए रस के लिए उदीपन का वातावरण पैदा करने का प्रयास ही नहीं किया गया। संपूर्ण काव्य में कोई घटना घटित ही नहीं होती। अतः विभाव-अनुभाव और संचारी भाव का संयोग रस के आखंड तंत्र में उपस्थित नहीं हो पाता। 'कुरुक्षेत्र' में करुणा और निर्वेद के छीटें पड़े हैं, संवादों में वीर रस के उत्साह की व्यंजना हुई है और शांत रस की भूमिका बनी है। किंतु ऐसी कोई भी स्थिति नहीं आई हैं जो संचारी भावों से आगे बढ़ पाती। निर्वेद, आवेग, विषाद, चिंता, ग्लानि आदि संचारियों की दिनकर ने मार्मिक व्यंजना की है। सारांश यह है कि 'कुरुक्षेत्र' में परंपरागत रस व्यंजना का अभाव है।

बोध प्रश्न 3

क) 'कुरुक्षेत्र' से ऐसी चार पंक्तियों को उद्धृत कीजिए जो प्रकृति के रौद्र और क्रुद्ध रूप को प्रस्तुत करती हो?

.....

.....

.....

.....

ख) — दिनकर, विज्ञान और प्रकृति के बीच कैसे संबंध के पक्षधर हैं।

.....

.....

.....

.....

ग) प्रकृति के प्रति दृष्टिकोण में दिनकर की छायावादी कवियों से क्या समानता है?

.....

.....

.....

.....

घ) — 'कुरुक्षेत्र' में परंपरागत ढंग का रस विधान क्यों नहीं हुआ है?

.....

.....

.....

.....

37.7 सारांश

इस इकाई में आप "कुरुक्षेत्र" के वस्तु पक्ष का अध्ययन कर चुके हैं। अब आप जान गए हैं कि दिनकर ने "कुरुक्षेत्र" की कथा कहां से चुनी है? और क्यों चुनी है? वे कौन से प्रश्न और शंकाएं थीं जो उनके मन में घुमड़ रही थीं और जिनकी अभिव्यक्ति के लिए उन्होंने युधिष्टिर और भीष्म जैसे सुप्रसिद्ध पात्रों को चुना। अब आप यह भी समझ गए हैं कि इस कथानक का संजोजन और निर्वाह किस प्रकार किया गया है इस जानकारी से अब आप भीष्म ओर युधिष्ठिर के चरित्र की विशेषताएं बता सकते हैं। "कुरुक्षेत्र" में प्रस्तुत प्रकृति के प्रति दृष्टिकोण की जानकारी भी आप को मिल गई है अब आप यह जानते हैं कि इस दृष्टि में परंपरागत रस विधान का आश्रय नहीं लिया गया है। स्थायी भावों की तीव्र अभिव्यक्ति के बावजूद वे रसदशा तक नहीं पहुंच सके हैं।

37.8 शब्दावली

अंगीरस: कथा के प्रधान रस को अंगीरस कहते हैं। प्रायः अंगीरस का संबंध कथा के नायक से होता है। मूलतः जो भाव या रस कथा के कलेवर में सर्वाधिक व्याप्त होता है उसे ही अंगीरस कहते हैं।

विभाव पक्ष: यह काव्य का कारण पक्ष है जिसके अंतर्गत कथा का आधार और वैचारिक योजना दोनों ही समाविष्ट रहते हैं। शास्त्रीय शब्दावली में इसके अंतर्गत आलंबन और उद्दीपन दोनों ही भाव शामिल रहते हैं।

भाव सामंजस्य: विरोधी भावों में जब कवि, सौंदर्य की सृष्टि करता है तब उसे भाव सामंजस्य की स्थिति कहते हैं।

अनुभाव: आश्रय के शारीरिक विकारों को अनुभाव कहते हैं इन्हें सात्विक भाव भी कहा जाता है जिनकी संख्या आठ मानी गई है। मूलतः यह दो प्रकार के होते हैं यत्नज और अयत्नज।

संचारी भाव: जो भाव क्षण-क्षण में उठते या नष्ट होते हैं तथा जो स्थायी भावों का पोषण करते हैं उन संचरणशील भावों को संचारी भाव कहते हैं। इनका एक नाम व्यभिचारी भाव भी है।

स्थायी भाव: विरुद्ध या अविरुद्ध (मित्र-शत्रु) भाव जिसकी सत्ता को कभी नष्ट नहीं कर पाते उसे स्थायी भाव कहते हैं। स्थायी भाव अन्य भावों से पुष्ट होकर रसरूप में अभिव्यक्ति होते हैं। प्राचीन आचार्य रसों की संख्या 9 मानते थे तद्नुसार उन्होंने 9 स्थायी भावों की कल्पना की जैसे वीररस का स्थायी भाव उत्साह शृंगार रस का स्थायी भाव रति आदि।

निर्वेद: यह शांत रस का स्थायी भाव है। निर्वेद, शास्त्र और दर्शन के पारायण से उत्पन्न सांसारिक विराग का संकेत देने वाला भाव है।

रससिद्धि: भाव के भोग का नाम है आनंद और आनंद के आस्वादन की परिपूर्णता ही रससिद्धि है।

जुगुप्सा: यह वीभत्स रस का स्थायी भाव है। सामान्यतः यह वर्णन की विद्रूपता और घृणास्पद स्थितियों के चित्रण से उत्पन्न होने की भाव स्थिति है।

प्रतिनायक: मूलतः प्रतिनायक, नायक का विरोधी होता है। यदि नायक धीरोदात्त हो तो प्रतिनायक धीरोद्धत जैसे रामकथा में राम नायक है और रावण प्रतिनायक।

37.9 बोध प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न 1

1 क) शांति पर्व "ओर" उद्योग पर्व

ख) देखें भाग 37.3

ग) देखें भाग 37.3

घ) कवि ने ध्यान रखा है कि भीष्म और युधिष्ठिर के मुँह से कोई ऐसी बात न निकल जाए जो द्वापर युग के अनुकूल न हो।

2 क) नहीं ख) हां ग) नहीं घ) नहीं ङ) हां।

3 क) नाटकीय ख) तूफान ग) कल्याण

बोध प्रश्न 2

क) देखें भाग 37.4

ख) देखें भाग 37.4

ग) देखें भाग 37.4.2

घ) देखें भाग 37.4.3

बोध प्रश्न 3

क) देखें "कुरुक्षेत्र" का सर्ग 2 अथवा इस इकाई का भाग 37.5

ख) देखें भाग 37.5

ग) देखें भाग 37.5

घ) देखें भाग 37.6